नृत्य की वैदिक अवधारणा

डॉ. सोनिया

सहायक आचार्य, संस्कृत,

इग्नू ,मानविकी विद्यापीठ,
नई दिल्ली

वेदों में नृत्य का उल्लेख समाज की समृद्धि, सांस्कृतिक उन्नति, और धार्मिक जीवन का प्रतीक है। यह केवल कला नहीं, बल्कि मानव जीवन के आनंद, उत्सव, और आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का भी माध्यम है। अथर्ववेद में प्रश्न पूछा गया कि इस शरीर में किसने सञ्चालन दिया।113 ग्यारहवें काण्ड के आठवें सूक्त में, जिसका देवता अध्यात्म है, ऋषि कहते हैं कि आनंद, मोद, प्रमोद और नृत मानव शरीर में प्रवेश करते हैं।114 इससे यह स्पष्ट होता है कि नृत्य केवल भौतिक गतिविधि नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का भी माध्यम है। अग्रिम काण्ड के दूसरे काण्ड के सूक्त में, जिसका देवता मृत्यु है, ऋषि मनुष्य को नृत्य, हास्य, और वीरता के साथ जीवन यापन करने का उपदेश देते हैं।115 यह नृत्य के जीवन-शक्ति और साहस के प्रतीकात्मक रूप को दर्शाता है। यजुर्वेद में नृत्य के लिए संगीत, ताल आदि का भी साथ में होने का उल्लेख उपलब्ध होता है116 नृत्य शब्द "नृत् "धातु से बना है, जिसका अर्थ है गात्र का विक्षेप। निरुक्तकार ने नर शब्द की व्युत्पत्ति में भी यही कहा है कि जो कर्म व्यवस्था में नृत्य करता है117, वह सभी प्रकार के विक्षेप करता है। इस प्रकार, यदि गात्र विक्षेप भावआश्रित है तो उसे नृत्य कहा जाता है118 तो नृत्य कहलाता है। इसी नृत् धातु से औणादिक "कु "प्रत्यय होने पर पुल्लिंग में संज्ञावाचक नृतु :शब्द बनता है।119 नृतु शब्द का प्रयोग 10बार हुआ है।120 जिनमे इंद्र देवता को नृत्य और उल्लास के साथ जोड़ा गया है। इंद्र के साथ-साथ उनके सहचर *मरुत* और *अश्विन* भी नृत्य करते हुए चित्रित किए गए हैं। मरुतों तथा अश्विन देवताओं को भी नृत्य और संगीत

113को अस्मिन्नेतो न्य धधात्तन्तुरा तायतामिति। मेधां को अस्मिन्नध्यौहत्को बाणं को नृतो दधौ ॥- अथर्ववेद (10.2.17)

114आनन्दा मोदाः प्रमुदोऽभिमोदमुदश्च ये। हसो नरिष्टा नृत्तानि शरीरमनु प्राविशन् ॥- अथर्ववेद (11.8.24)

115इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य। प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय सुवीरासो विदथमा वदेम ॥ अथर्ववेद (12.2.22)

116 (30.20)

117नरा मनुष्या नृत्यन्ति कर्मसु ।- ,

118भावाश्रयं नृत्यं – दशरूपक,1.9

119पुं,(नृत्यतीति । नृत् + बाहुलकात् कुः ।) नर्त्तकः

120ऋग्वेद 1.92.4,1.130.7,2.22.4,5.52.12,6.29.3,6.63.5,8.20.22,8.24.9,8.24.12,10.29.2

से जोड़ा गया है। इस प्रकार नृत्य केवल आनंद और उल्लास का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह प्रकृति और ब्रह्मांडीय ऊर्जा की गति और ताल का भी द्योतक है। सम्पूर्ण वेद में 'नृत्य 'शब्द का प्रयोग संज्ञा तथा क्रिया वाचक पद के रूप में 11 बार किया गया है। ऋग्वेद में एक बार एवम् अथर्ववेद में दस बार उल्लेख है।

ऋग्वेद के इस मंत्र121 में नृत्य का दृष्टिकोण एक व्यापक और गहन आध्यात्मिक भाव को अभिव्यक्त करता है। यह केवल भौतिक गति का वर्णन नहीं करता, बल्कि ब्रह्मांडीय ऊर्जा, प्राकृतिक गतिविधियों, और जीवन के साथ उसके संतुलन को भी व्यक्त करता है। जब सूर्य की रश्मियाँ पृथ्वी पर पड़ती हैं, तो उनकी गतिशीलता और प्रभाव एक नृत्य के रूप में प्रकट होती है, जो न केवल जीवनवायिनी ऊर्जा का प्रतीक है, बल्कि प्राकृतिक ताल और सामंजस्य का भी सूचक है। वैदिक संस्कृति में नृत्य को आनंद और उत्सव के साथ-साथ एक आध्यात्मिक प्रक्रिया के रूप में भी देखा गया है। मन्त्र में आए "नृत्यतामिव "शब्द यह इंगित करता है कि यह गतिशीलता केवल बाह्य नहीं, बल्कि आंतरिक स्थिरता में भी परिलक्षित होती है। यह मंत्र प्रकृति के अनवरत प्रवाह और ऊर्जा के सतत् गतिशील स्वरूप को एक नृत्य के रूप में प्रस्तुत करता है, जो जीवन और ब्रह्मांड के बीच की अनिवार्य कड़ी है।

इस प्रकार, ऋग्वेद के ऋषियों ने नृत्य को एक कला से ऊपर उठाकर उसे ब्रह्मांडीय गतिविधियों और आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का प्रतीक बनाया, जो हमें यह सिखाता है कि सृष्टि का हर तत्व एक गहन, संतुलित, और सामंजस्यपूर्ण नृत्य का हिस्सा है।

आनृत्यतः शिखण्डिनो गन्धर्वस्याप्सरापतेः।
भिनद्मि मुष्कावपि यामि शेपः ॥

अथर्ववेद के इस मंत्र122 में नृत्य को केवल शारीरिक गति या आनंद का माध्यम नहीं, बल्कि आत्मिक शुद्धि और ब्रह्मांडीय संतुलन का प्रतीक माना गया है। "आनृत्यतः "और "शिखण्डिनः123 "जैसे शब्द कर्म और उन्नति की गतिशीलता को दर्शाते हैं, जबकि "गन्धर्व124 "और "अप्सरापति125 "के रूप में परमेश्वर को सृष्टि के सौंदर्य और ऊर्जा का स्रोत बताया गया है। यहाँ नृत्य की अभिव्यक्ति मनुष्य के भीतर स्थित काम और क्रोध जैसे आंतरिक दोषों को पहचानने और उन्हें समाप्त करने की प्रक्रिया का प्रतीक है। यह नृत्य ब्रह्मांडीय ऊर्जा, आत्मिक शुद्धि और जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण का माध्यम बनकर वैदिक संस्कृति के गहरे आध्यात्मिक संदेश को उजागर करता है।

121यद्देवा अदः सलिले सुसंरब्धा अतिष्ठत । अत्रा वो नृत्यतामिव तीव्रो रेणुरपायत - ऋग्वेद (10.72.6)

122अथर्ववेद (4.37.7) :

123 अण्डन् - कृसृभृवृन्रः। उणादि कोष (1.129) इति शिख गतौ-अण्डन्, स च कित् तत इनि। गतिमन्तः। उद्योगिनः।

124 यो गां पृथिवीं धरति सः। गन्धर्वो वायुस्तस्य वातो गन्धर्वस्तस्यापो अप्सरसः। (श०ब्रा०९.३.३.१०)

125 अप+ सर+ टाप्। अप्सराः= अप+ सृ (गतौ) असुन्।

अथर्ववेद के मंत्र126)4/83/3) में नृत्य को एक गहन आध्यात्मिक और कर्मकांडीय अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। मंत्र में नृत्य को शक्ति और दिव्य आशीर्वाद के माध्यम से व्यक्त किया गया है, जो हमारे कर्मों को सही दिशा में ले जाने के लिए कार्यरत होती है। यहाँ नृत्य केवल शारीरिक गति का प्रतीक नहीं है, बल्कि इसे एक दिव्य शक्ति के रूप में देखा गया है, जो हमारे प्रयासों को शक्ति प्रदान करती है और हमें जीवन में समृद्धि और विजय की ओर मार्गदर्शन करती है। यह नृत्य, जो कर्मों और संकल्पों के साथ जुड़ा है, हमारे जीवन के उद्देश्यों की प्राप्ति और धन की रक्षा का माध्यम बनता है। इस प्रकार, नृत्य का उल्लेख इस मंत्र में जीवन शक्ति, उत्साह और ब्रह्मांडीय ऊर्जा के प्रतीक के रूप में किया गया है।

श्रेयःकेतो वसुजित्सहीयान्त्संग्रामजित्संशितो ब्रह्मणासि।
अंशूनिव ग्रावाधिषवणे अद्रिर्गव्यन्दुन्दुभेऽधि नृत्य वेदः ॥127

इस मंत्र के अर्थ को ध्यान में रखते हुए, नृत्य को एक शक्तिशाली और ब्रह्मांडीय गतिविधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसे विशेष परिस्थितियों में किया जाता है। नृत्य तब करने को कहा गया है जब किसी विशेष लक्ष्य, जैसे)संग्रामजित् (शत्रु पर विजय प्राप्त करना,)वसुजित्(धन का अधिग्रहण करना, या)सहीयान् (जीवन के संघर्षों में सफलता प्राप्त करना, आवश्यक हो। यह नृत्य केवल शारीरिक गति का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह एक आध्यात्मिक और तात्त्विक प्रक्रिया है, जो ब्रह्मांडीय ऊर्जा के प्रवाह को नियंत्रित करने और उसे अपने पक्ष में लाने का कार्य करता है। नृत्य को इस मंत्र में शक्ति और विजय के प्रतीक के रूप में दर्शाया गया है, और यह तब किया जाता है जब व्यक्ति को बाहरी संघर्षों)जैसे युद्ध, संघर्ष, या प्रतिस्पर्धा (में सफलता प्राप्त करने के लिए ब्रह्मांडीय सहयोग की आवश्यकता होती है। यह नृत्य ब्रह्माणीय ऊर्जा और आत्मविश्वास का प्रतीक है, जिसे शक्ति के साथ नियंत्रित और संचालित किया जाता है, ताकि शत्रु के धन और संसाधनों को वश में किया जा सके। इस प्रकार, नृत्य तब करने को कहा गया है जब व्यक्ति को आध्यात्मिक, मानसिक या भौतिक सफलता की आवश्यकता हो, और उसे ब्रह्मांडीय शक्तियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता हो।

ये शालाः परिनृत्यन्ति सायं गर्दभनादिनः।
कुसूला ये च कुक्षिलाः ककुभाः करुमाः स्रिमाः।
तानोषधे त्वं गन्धेन विषूचीनान्वि नाशय ॥128

अथर्ववेद के इस मन्त्र के आधार पर नृत्य को एक रचनात्मक और शुद्धिकरण की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है, जहाँ व्यक्ति अपने आस-पास की नकारात्मक शक्तियों या विघ्नों को नष्ट करने के लिए अपनी शारीरिक और मानसिक ऊर्जा का प्रयोग

126यायैः परिनृत्यत्याददाना कृतं ग्लहात्। सा नः कृतानि सीषती प्रहामाप्नोतु मायया। सा नः पयस्वत्यैतु मा नो जैषुरिदं धनम् ॥ (अथर्ववेद 4.83.3)

127अथर्ववेद(5.20.10)

128अथर्ववेद(8.6.10)

करता है। यहाँ नृत्य का प्रतीकात्मक अर्थ यह है कि जैसे औषधि या उपचार से कीड़ों को नष्ट किया जाता है, वैसे ही नृत्य द्वारा मानसिक और आध्यात्मिक शुद्धता प्राप्त की जा सकती है, जो जीवन में सुख, शांति और समृद्धि लाती है।

ये कुकुन्धाः कुकूरभाः कृत्तीर्दूर्शानि बिभ्रति।

क्लीबा इव प्रनृत्यन्तो वने ये कुर्वते घोषं तानितो नाशयामसि ॥129

इस मंत्र में "नृत्य "का प्रयोग नकारात्मक शक्तियों, जैसे कीड़े और उनके कार्यों के संदर्भ में किया गया है। "प्रनृत्यन्तः "शब्द का प्रयोग यह दर्शाता है कि यह कीड़े किसी उद्देश्य के बिना, या बिना किसी सकारात्मक उद्देश्य के नाचते हैं, जैसे कि क्लीब के नृत्य का बोध होता है। यह नृत्य किसी आध्यात्मिक या शुद्धिकरण प्रक्रिया का हिस्सा नहीं है, बल्कि यह एक व्यर्थ, उद्देश्यहीन, और नकारात्मक गतिविधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन कीड़ों का नृत्य उनके अवांछनीय कार्यों)जैसे हिंसा, विकार और विघ्न उत्पन्न करना (को और अधिक बढ़ावा देने वाला होता है। इस प्रकार, नृत्य यहाँ पर गात्र विक्षेप और उद्देश्यहीन चेष्टा के रूप में देखा जा सकता है, जो किसी भी सकारात्मक या सार्थक परिणाम की ओर नहीं जाता। यह एक प्रतीकात्मक रूप से नकारात्मक कार्य है, जो जीवन में विघ्न और नकारात्मकता की उत्पत्ति करता है। इस मंत्र का उद्देश्य ऐसे विक्षेप को समाप्त करना है और नकारात्मक शक्तियों को नष्ट करना है, ताकि जीवन में शांति और सकारात्मकता बनी रहे।

तयोरहं परिनृत्यन्त्योरिव न वि जानामि यतरा परस्तात्।

पुमानेनद्वयत्युद्गृणत्ति पुमानेनद्वि जभाराधि नाके ॥130

यह मन्त्र नृत्य की क्रिया को जीवन, समय और ब्रह्मांड के निरंतर प्रवाह से जोड़ता है। "परिनत्यन्त्योः इव) "नृत्य-सा करती हुई (शब्द नृत्य की गतिशीलता और निरंतर परिवर्तन को दर्शाते हैं। यहाँ पर नृत्य एक रूपक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें उषा)प्रातः (और रात्रि की क्रियाएँ इस निरंतर चक्र को व्यक्त करती हैं। यह चक्र न जाने कब से चल रहा है और इसका कोई निश्चित प्रारंभ या अंत नहीं है, जैसे नृत्य की क्रिया भी अनंत और निरंतर चलनेवाली होती है। "पुमान्) "परम पुरुष (का उल्लेख ब्रह्मा या सृष्टि के सर्जक के रूप में किया गया है, जो इस सम्पूर्ण विश्वजाल को बुनता है और फिर उसे अपने उद्देश्य अनुसार उधेड़ता है)उत् गृणत्ति(। इसका मतलब यह है कि जीवन और सृष्टि की गतिविधियाँ (जिन्हें नृत्य के रूप में देखा जा सकता है (उसी परम शक्ति के द्वारा नियंत्रित होती हैं, जो उसे निरंतर रूप से उत्पन्न और समाप्त करता है। यह मन्त्र नृत्य को एक सशक्त प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करता है, जो न केवल शारीरिक क्रिया है, बल्कि जीवन के निरंतर परिवर्तनों, ब्रह्मांडीय ऊर्जा, और परम पुरुष की रचनात्मक शक्ति का भी प्रतीक है। नृत्य एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा ब्रह्मांड और जीवन के सृष्टिकर्ता का अदृश्य चक्र कार्य करता है, जो बिना थमे और निरंतर चलता रहता है।

129अथर्ववेद(8.6.11)

130अथर्ववेद(10.7.43)

अथर्ववेद का मन्त्र131 वेदवाणी और यज्ञ के महत्त्व को नृत्य और अन्य क्रियाओं के माध्यम से व्यक्त करता है। वेदवाणी को एक धेनु)गाय (के रूप में चित्रित किया गया है, जो यज्ञ में भाग लेने वाले व्यक्ति की आत्मा और जीवन को शुद्ध करती है। "ते चर्म "और "ते लोमानि "शब्दों में यह संकेत किया गया है कि व्यक्ति का शरीर और उसका अस्तित्व भी यज्ञ में समर्पित होकर धर्म और शुद्धता की ओर बढ़ता है। यहाँ नृत्य की क्रिया एक रूपक के रूप में है, जहाँ "एषा त्वा रशनाग्रभीद्ग्रावा) "यह रज्जु तुझे बांधती है, यह स्तोता तुझपर नृत्य करता है (का अर्थ है कि वेदवाणी, जैसे एक नृत्य की तरह, व्यक्ति के जीवन और कर्मों को नियंत्रित करती है और उसे धर्म के पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती है। यह नृत्य एक आध्यात्मिक प्रक्रिया का प्रतीक है, जो व्यक्ति को शुद्ध करता है और उसे यज्ञ)आध्यात्मिक साधना (के माध्यम से ब्रह्म या परम शक्ति के साथ जोड़ता है।मन्त्र में यह भी कहा गया है कि वेदध्यान और यज्ञ का अभ्यास करने वाला व्यक्ति शुद्ध और यज्ञशील बनकर दिव्य सुखों और शांति को प्राप्त करता है, जो स्वर्ग की ओर जाने का मार्ग है। नृत्य यहाँ जीवन के शुद्धिकरण, आत्मा के उन्नयन और आध्यात्मिक उन्नति के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

एक अन्य मन्त्र132 वेदवाणी)वशा (को एक दिव्य और उच्चतर शक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है, जो मानव हृदय और आत्मा में प्रवेश करती है। यहाँ नृत्य)प्रानृत्यत् (का संदर्भ आंतरिक आनंद और जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति से जुड़ा हुआ है। वेदवाणी को "समुद्र "के रूप में दर्शाया गया है, जो उस व्यक्ति के भीतर नृत्य करती है, जो मानसिक रूप से शुद्ध और प्रसन्नचित्त होता है। यह मन्त्र यह भी दर्शाता है कि वेदवाणी)सामानि और ऋचः (उन ऊँचे उद्देश्य वाले लोगों (पतत्रिभिः (के साथ संगति करती है, जो अपने जीवन में उच्चतम सिद्धियों की ओर अग्रसर होते हैं। "वातेन "शब्द का प्रयोग मन की गति और संकल्प को दर्शाता है, जो व्यक्ति के भीतर आध्यात्मिक उन्नति के लिए आवश्यक होते हैं।

संक्षेप में, यह मन्त्र नृत्य के माध्यम से जीवन की ऊँचाइयों को प्राप्त करने का संकेत देता है, जो मानसिक और आध्यात्मिक प्रसन्नता, ज्ञान और उद्देश्यों की पूर्ति के रूप में प्रकट होता है।

एक मन्त्र133 भूमि और समाज की स्थिति को चित्रित करता है, जहां गायन और नृत्य की क्रियाएँ युद्ध और संघर्ष के संदर्भ में स्थानांतरित होती हैं। इस मन्त्र में "गायन्ति नृत्यन्ति) "गाते और नृत्य करते हैं (शब्द का प्रयोग एक समृद्ध और शांतिपूर्ण वातावरण की ओर संकेत करता है, जिसमें लोग खुशी और उल्लास के साथ गायन और नृत्य करते हैं। दूसरी ओर, "युध्यन्ते) "युद्ध करते हैं (और "आक्रन्दो) "ललकार (शब्द युद्ध और संघर्ष की स्थितियों को दर्शाते हैं।

यह मन्त्र यह संदेश देता है कि भूमि पर जहां गायन और नृत्य होते हैं, वहां युद्ध और संघर्ष की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। "सा नो भूमिः) "वह भूमि हमें प्रदान की जाए (और "सपत्नान् प्रणुदताम्) "हमें शत्रुओं से मुक्त किया जाए (शब्दों के

131वेदिष्टे चर्म भवतु बर्हिर्लोमानि यानि ते। एषा त्वा रशनाग्रभीद्भावा त्वैषोऽधि नृत्यतु ॥ अथर्ववेद(10.9.2)

132सं हि वातेनागत समु सर्वैः पतत्रिभिः। वशा समुद्रे प्रानृत्यदृचः सामानि बिभ्रती ॥ अथर्ववेद (10.10.14)

133यस्यां गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यां मर्त्या व्यैलबाः। युध्यन्ते यस्यामाक्रन्दो यस्यां वदति दुन्दुभिः। सा नो भूमिः प्र णुदतां सपत्नानसपत्नं मा पृथिवी कृणोतु ॥ अथर्ववेद (12.1.41)

माध्यम से यह प्रार्थना की जाती है कि भूमि शांति और समृद्धि से भरी हो, जहां संघर्ष और युद्ध की स्थिति उत्पन्न न हो। नृत्य और गायन को एक सकारात्मक और शांति के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

अथर्ववेद का ही एक अन्य मन्त्र एक दृश्य का चित्रण करता है, जहाँ नृत्य की क्रिया और उसकी प्रतीकात्मकता को अशुभ और पापपूर्ण क्रियाओं के साथ जोड़ा गया है। यहां "नृत्यन्ति) "नाचती हैं (शब्द का प्रयोग उन स्त्रियों के संदर्भ में किया गया है जो अशुभ क्रियाओं को प्रदर्शित करती हैं, जैसे कि अपने बालों को खोले हुए नाचना और पापपूर्ण ध्वनियाँ करना। इन स्त्रियों का नृत्य एक विध्वंस और बुराई के रूपक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो उस स्थान पर आकर कोलाहल और अशांति फैलाती हैं।

इसके अतिरिक्त, "गृधाः) "गिद्ध (और "वृकाः) "भेड़िये (शब्दों के माध्यम से यह संकेत दिया गया है कि उस स्थान पर हानि और विध्वंस होता है, जहां यह नृत्य होता है। यह नृत्य और ध्वनि उस स्थान के विनाश और अधोगति का प्रतीक हैं, जहां अच्छे कर्मों की कमी होती है। मन्त्र का सार यह है कि नृत्य को यहां एक नकारात्मक और अशुभ क्रिया के रूप में चित्रित किया गया है, जो समाज या व्यक्ति के पतन और विघटन का कारण बनता है। यह एक चेतावनी है कि पाप और अशुभ कार्यों से जुड़ी नृत्य जैसी क्रियाएँ अंततः विध्वंस और विघटन का कारण बनती हैं।

इस प्रकार इन मंत्रों के माध्यम से नृत्य की क्रिया वेदों में एक गहन और बहुआयामी प्रतीक के रूप में प्रस्तुत की गई है। यह केवल शारीरिक गति का प्रतीक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और ब्रह्मांडीय शक्ति के प्रवाह का सूचक भी है। वेदों में नृत्य को जीवन के उद्देश्यों और ब्रह्मांडीय संतुलन के साथ जोड़ा गया है, जहां यह शुद्धिकरण, आत्मिक उन्नति और समृद्धि का माध्यम बनता है। नृत्य का उद्देश्य न केवल बाह्य क्रियाओं को व्यक्त करना है, बल्कि यह आंतरिक ऊर्जा और शक्ति को सक्रिय करने की प्रक्रिया है। यह जीवन की प्रवृत्तियों और ब्रह्मांडीय गतिशीलता को पहचानने का एक तरीका है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में नृत्य को पृथ्वी, आकाश, और जीवन के सभी पहलुओं से जोड़कर दर्शाया गया है, जहां यह प्राकृतिक सामंजस्य और ऊर्जा के संचार का प्रतीक बनता है।

वेदों में नृत्य के माध्यम से शुद्धि और समृद्धि की प्राप्ति की जाती है। जब व्यक्ति नृत्य करता है, तो वह न केवल शारीरिक रूप से सक्रिय होता है, बल्कि अपनी मानसिक और आत्मिक स्थिति को भी सुदृढ़ करता है। नृत्य के माध्यम से जीवन की ऊर्जा को सही दिशा में मोड़ा जा सकता है, जिससे जीवन में समृद्धि और सफलता आती है। कुछ मंत्रों में नृत्य को बाहरी संघर्षों, जैसे युद्ध और शत्रुता, से विजय प्राप्त करने के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जबकि अन्य में यह कर्म और संकल्प के साथ जुड़ी शक्ति का प्रतीक है। नृत्य तब किया जाता है जब किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति की आवश्यकता होती है, जैसे शत्रु पर विजय प्राप्त करना या आंतरिक शुद्धि की प्राप्ति। वहीं दूसरी ओर, कुछ मंत्रों में नृत्य को नकारात्मक और अशुभ क्रियाओं से जोड़ा गया है, जो समाज या व्यक्ति के पतन का कारण बनती हैं। यह दर्शाता है कि नृत्य, जैसे अन्य क्रियाएँ, अपने उद्देश्य और संदर्भ पर निर्भर करती हैं। सकारात्मक संदर्भ में नृत्य जीवन को उच्च उद्देश्य की ओर मार्गदर्शन करता है, जबकि नकारात्मक संदर्भ में यह विनाश और विघटन का कारण बन सकता है।

नृत्य का प्रतीकात्मक अर्थ यह है कि जैसे जीवन और सृष्टि निरंतर चलनेवाली प्रक्रिया है, वैसे ही नृत्य एक निरंतर गतिशीलता का संकेत है, जो सृजन और संहार के बीच संतुलन बनाए रखता है। यह सृष्टि के अनवरत चक्र को एक सुंदर और संतुलित रूप में व्यक्त करता है। नृत्य के माध्यम से व्यक्ति अपने भीतर की नकारात्मक शक्तियों को समाप्त करता है और आत्मिक शुद्धता प्राप्त

करता है। यह प्रक्रिया व्यक्ति को ब्रह्मांडीय ऊर्जा के प्रवाह से जोड़ती है और जीवन के वास्तविक उद्देश्य की ओर मार्गदर्शन करती है।

निष्कर्ष रूप में, नृत्य केवल एक शारीरिक क्रिया नहीं है, बल्कि यह जीवन के गहरे आध्यात्मिक और ब्रह्मांडीय पहलुओं का प्रतीक है। वेदों में नृत्य को शक्ति, संतुलन, और समृद्धि के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो व्यक्ति को आत्मिक उन्नति और ब्रह्मांडीय ऊर्जा के साथ सामंजस्य स्थापित करने का अवसर प्रदान करता है।

☆☆☆